International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नवगीत के प्रगतिशील संदर्भ

डॉ. सरिता
असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी)
श्यामलाल कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय

हिन्दी साहित्य में नवगीत धारा का उद्‌गम पचास के दशक में हुआ। इस समय जहाँ एक ओर हिन्दी गीत क्रमशः रूढ़िगत होने लगा था, वहीं दूसरी ओर प्रयोगवाद और नई कविता के आग्रह के कारण छंद, लय और गीत को पूर्णतः अप्रासंगिक ठहरा दिया था। यद्यपि छायावादी गीतों की एक समृद्ध परम्परा नवगीत से पूर्व विद्यमान थी, परन्तु आरोपित भाववादी शैली और व्यक्तिकेन्द्रिता के आधिक्य के कारण वह अप्रासंगिक होती जा रही थी। सर्वप्रथम निराला ने ही हिन्दी गीत को एक नई दिशा दी, जिससे गीत के क्षेत्र में छायावादी व्यक्तिकेन्द्रिता का अतिक्रमण हुआ और गीत सामान्य जनजीवन के साथ जुड़ गया। बच्चन, अंचल और अन्य रोमानी गीतकारों की रचनाओं की प्रतिक्रिया में गीत का जो स्वरूप उभरा उसका एक बड़ा हिस्सा कालान्तर में नवगीत से जुड़ गया। इस प्रकार रूढ़ पद्धति तथा पारम्परिक भाव–बोध को छोड़कर नवीन पद्धति और विचारों के नवीन आयामों से युक्त गीत ही नवगीत कहलाया। आगे चलकर शम्भुनाथ सिंह, वीरेन्द्र मिश्र, रामदरश मिश्र, शील, शैलेन्द्र , माहेश्वर तिवारी, देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' और रमेश रंजक जैसे गीतकारों ने इसे समाज की तत्कालीन परिस्थितियों के साथ जोड़ा। समय और समाज के साथ प्रतिबद्धता दिखाने वाले इन नवगीतकारों के काव्य में इनकी प्रगतिशील चेतना का प्रतिबिम्ब दृष्टिगत होता है, जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान परिवेश में यथार्थ–बोध, समष्टि उन्मुखता, प्रकृति प्रेम और सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टि, समृद्ध सांस्कृतिक चेतना, जातीय अस्मिता के प्रति सजगता का भाव, शोषण, अन्याय जनित स्थितियों के प्रति आक्रोश, व्यंग्य, करूणा, समाज विकास की संभावना आदि प्रगतिशील तत्व नवगीत की प्रगतिशीलता के नियामक बने।

नवगीत वस्तुतः गीतों को जीवन के यथार्थ से परिचित कराने का एक कदम है–

इन्द्रधनुषी वातावरण में,
खो न जाना फूल होके
गीत मेरे
बड़ी मुश्किल से तुम्हें
मोड़ पाया धम ढो के।[1]

देखा जा सकता है कि 'आँगनधर्मी' गीत अब सड़क पर उतर आये हैं। गीतों में आम आदमी का यह 'इन्वाल्वमेंट' गीतों को ठोस यथार्थ की भूमि पर अवस्थित करता है, जो समाज की प्रत्येक अनुभूति को स्वर देते हुए जीवन में व्याप्त आक्रोश, कुण्ठा, क्षोभ आदि को प्रस्तुत करता है और संवेदना के व्यापक स्तरों को स्पर्श करता हुआ दिखाई देता है। गीतकारों को अनुभव हुआ कि कल्पना की रमणीयता से भी अधिक सुन्दर जीवन की सच्चाइयाँ हैं। प्रथम बार गीतकारों के सामने जनसामान्य की विसंगतियों ने सिर उठाया है। वीरेन्द्र मिश्र की यह काव्य पंक्ति 'दूर होती जा रही है कल्पना, पास आती जा रही है जिंदगी' इस बात का प्रमाण है कि उस समय गीतकार के दृष्टिकोण में एक मौलिक परिवर्तन आने लगा था। अपनी प्रेमिका के आँसुओं की अपेक्षा उसे शोषित और पीड़ित जनता का दर्द तथा पीड़ा अधिक रूचिकर लगने लगी–

पीर मेरी कर रही गमगीन मुझ को
और उसे भी अधिक तेरे नयन का नीर रानी
और उससे भी अधिक हर पाँव की जंजीर रानी।[2]

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नवगीत आम आदमी की कविता है, जिसमें उसके प्रति सहानुभूति के स्वर मिलते हैं। उस पर होने वाले शोषण, दमन और अत्याचार को नवगीत में प्रत्यक्षतः देखा जा सकता है। 'गीत विधा की अपनी ताकत और जोर है जिससे वह चीजों को छूति और टटोलती जाती है। आम आदमी के बदलते परिवेश, संकट, घुटन, और पीड़ा को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करती है।[3] 'आदमी को गीत ने अपने में रचा बसा लिया है, गीत राजपथ पर नहीं चलता, जनपथ पर चलता है। उसका यह जनपथीय चरित्र ही उसके भीतर की बात को आम आदमी तक ले जाता है।'[4] वास्तव में प्रगतिशील साहित्यिक सृजन एक ऐसा सृजन है जो संघर्षशील मानव समुदाय के जीवन की समग्रता को सर्वोपरि समझता है और इसलिए कोरे मानववाद के आदर्श को छोड़कर ऐसे मानववाद की अवतारणा के लिए प्रतिबद्ध है जो जीवन के द्वन्द्व को ही आदमी लगाए रहता है और आदमियों के बीच की मुक्ति उनके बीच खोजता है। नवगीतकारों के सृजन के मूल में सामाजिकता का बोध देखा जा सकता है जो व्यापक जीवन संदर्भों की अभिव्यक्ति से निर्मित हुआ है। 'आदमी की कविता तभी अर्थवंत हो सकती है जब वह जीवन की अर्थवत्ता पाए और संप्रेषणीय होकर आदमी की मानसिकता में प्रविष्ट करे और आदमी को आदमी से जोड़े।'[5] वे ऐसा गीत गाना चाहते हैं जिसमें आदमी का दर्द हो, उसकी टूटून और थकान की सफल अभिव्यक्ति में ही वे अपनी जीत मानते हैं–

मेरा गीत न गा पाया यदि दर्द आदमी का

अगर नहीं कर पाया थके पसीने का टीका

भाषा बोल न पाया हारी थकी झुर्रियों की

लाख मिले मुझको बाजारू जीत कुछ नहीं।[6]

समाज, संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है, क्योंकि सभी मान्यताओं का आधार समाज ही होता है। नवगीतकारों के गीतों में प्रत्येक अनुभूति समाज के परिप्रेक्ष्य में ही है। इनका समाज कल्पना से युक्त नहीं अपितु यथार्थ लोक है। इसमें जीर्ण, शोषित, उत्पीड़ित वर्गों के प्रति सहानुभूति का भाव मिलता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने दिन बाद भी सामान्य जनता के दुखों, अभावों और समस्याओं का अंत नहीं हुआ, अपितु वे आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। शक्ति सम्पन्न लोग केवल स्वार्थपूर्ति में लगे हुए हैं जबकि मध्यम वर्ग आज भी अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हैं और गरीबी में अपनी जिंदगी का काट रहा है–

पपड़ाये

चहरों पर

टिकी हुई भूख

गहराते मेहों की

साँस गई सूख

कौन कहे कितने हैं पथराए साल[7]

आज आम आदमी महँगाई, अभाव, ऋण, बेकारी, बेरोजगारी जैसी समस्याओं से इस प्रकार त्रस्त है कि वह कमरतोड़ मेहनत करने के बावजूद भी अपने परिवार का भरण–पोषण करने में सक्षम नहीं है। अपनी इस असमर्थता पर वह मन मसोस कर रह जाता है।

इस आर्थिक विषमता का एक बहुत बड़ा कारण अशिक्षा भी है। ऐसे करोड़ों मजदूर हैं जो अशिक्षित हैं। उनके इस अज्ञान का लाभ महाजन उठाता है और वह गरीब मजदूर कई पीढ़ियों तक ब्याज चुकाता रहता है। ब्याज न चुकाये जाने की स्थिति में वह उस पर कोड़े बरसाता है–

अभी मिटे भी नहीं पीठ पर से

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

निशान कल के

और पाँव आने वाले भी

लगते हैं छल के।

माथे मिले लकीरों वाले

हाथ चोट खाए,

क्या तकदीर लिखी है मालिक,

हम तो भर पाए।[8]

नवगीत में जनजीवन की यंत्रणाओं के बड़े ही कारूणिक चित्र मिलते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के 58 साल बाद भी जनजीवन के अभावों, दुखों, समस्याओं का अंत नहीं हुआ। इसका एकमात्र कारण यह है कि प्रगति के लाभ से कुछ शक्तिशाली लोग ही लाभान्वित हुए। सामान्य जनजीवन को उन्नत बनाने के लिए सार्थक प्रयत्न नहीं किए गए। जिसके कारण यथेष्ट लाभ से वे वंचित रहे।

नवगीत में यथार्थ के संबंध में अनूप अशेष का कहना है– 'आज आदमी की तलाश आदमी स्वयं अपने भीतर नहीं कर पा रहा है। गाँवों, कस्बों, शहरों में बँटा हुआ आदमी अपनी भाग–दौड़ की मानसिक थकान से त्रस्त है, वर्तमान की कुंठा और भविष्य का भय उसे और भीतर से तोड़ रहा है। इन सभी स्थितियों की भोगी हुई, पहचानी हुई अनुभूति का सहज यथार्थ चित्रण आज नवगीत में अपनी आंतरिकता के साथ पूरी ईमानदारी से हो रहा है।'[9]

नवगीत काव्य राजनीति में व्याप्त स्वार्थपरता और सत्तालोलुपता की कटु निंदा करते हुए भारतीय जनता को सजग एवं सतर्क रहने के लिए प्ररित करता हैं। यद्यपि भारत एक धर्म–निरपेक्ष लोकतांत्रिक देश है, परन्तु आज भी यहाँ जाति, धर्म, सम्प्रदाय, वर्ग, भाषा और क्षेत्रियता के आधार पर भेदभाव किया जाता है। ऐसी विकट स्थिति को देखकर लगता है कि राजसत्ता भ्रष्ट, अपराध और अवसरवादी राजनेताओं का अड्डा बन गई है –

राजसत्ताढक गई बैसाखियों के शोर से

प्रतिष्ठानों की सियासत

जुड़ गई है शोर से।[10]

इन भ्रष्ट नेताओं ने सम्पूर्ण राष्ट्र को लूटकर अपना घर भर लिया है। अनैतिकता, मूल्यहीनता, निष्ठुरता, पदलोलुपता इनके जीवन का लक्ष्य बन गया है। आम आदमी न तो इनका विरोध कर पाने में समर्थ है और न इस स्थिति से बाहर आने में। नेता ही हमारे भाग्य विधाता बने हुए हैं और पुलिस दिन–रात इनकी रक्षा कर रही है, कैसी विडम्बना है–

इस दुनिया की चहल–पहल के

रंगढंग दस्तूर निराले

उजले बसन पहने बैठे हैं

मन से जन्म–जन्म के काले,

करनी से, हर कथनी को

झुठलाते हैं।[11]

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

कवियों ने अपनी रचनाओं में इस अराजक और अपराधपूर्ण स्थिति का विस्तार से वर्णन किया है। उनका मानना है कि इस देश के कर्णधार जनता के प्रति अपने कर्त्तव्य को भूल अपना हित साधने में लगे हुए हैं। आम जनता का सत्ता से विश्वास उठ गया है। फलतः साम्प्रदायिक दंगे, हिंसा, आतंक, हत्या आदि के कारण अराजक स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

कुंअर बेचैन भ्रष्ट राजनेताओं की काली करतूतों पर प्रकाश डालते हुए 'ततइया' को प्रेरित करते हैं कि वह इन भ्रष्ट नेताओं को जरूर काटे, इनके पेट में जनता की मेहनत का पैसा मौजूद है, अतः इन लूटेरों को डंक मारना और इनकी व्यवस्था को बदलना जरूरी है –

चल ततइया !

काट तन

मोटी व्यवस्था का

जो धकेले जा रही है देश का पहिया !

चल ततइया !!

ढंक कर पैना

चल बढ़ा सेना

थाम तुरही, छोड़कर मीठा पपइया !

चल ततइया !![12]

नवगीत में प्रेम और सौंदर्य को नए दृष्टिकोण के साथ चित्रित किया गया है, जो इसकी प्रगतिशीलता का परिचय देता है। नवगीत कवियों की प्रेमाभिव्यक्ति सामान्य जनजीवन से जुड़ी है। इनका प्रेम ऊँची–ऊँची अट्टालिकाओं में नहीं पनपता अपितु यह तो खेत खलिहानों, बाग बगीचों में आपस में सुख–दुख बांटने से पनपता है। वीरेन्द्र मिश्र की 'झुलसा है छायानट धूप में', 'गीत पंचम', 'अविराम चल मधुवंती', जैसी रचनाओं में प्रेम और सौंदर्य के सात्विक रूप की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। प्रेम में बलिदान को महत्व देते हुए वे लिखते हैं –

मिला एक घर आँसुओं को तिमिर में

कि अब हम स्वयं दीप बनकर जलेंगे

दिया कह रहा द्वार से देहरी से–

तुम्हारे लिए जिन्दगी होम देंगे।[13]

'अविराम चल मधुवंती' प्राकृतिक उपमानों द्वारा प्रेम की अभिव्यक्ति में परिवेश–बोध की जीवन्तता को साकार करती हुई दिखाई देती है –

क्षितिज अरगनी पीली चुनर झूल रही

खोयी–खोयी सी मधुवंती बेला में

सोया क्यों है तेरा पवन–झकोरा मन

जग रहे नभ की यशवंती बेला में।[14]

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

विरेन्द्र मिश्र की भांति रवीन्द्र भ्रमर ने भी अपने प्रेम की अभिव्यक्ति प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से की है। प्रसाद के नारी के प्रति विस्मय भाव का साम्य रवीन्द्र भ्रमर की इन पंक्तियों में देखा जा सकता है –

चांदनी के पंख–सी

उजली–धुली तुम कौन ?

तुम्हे तिरते बादलों के बीच देखा है।[15]

प्रेयसी के सानिध्य में कवि को संघर्षों, दुखों और पीड़ाओं से लड़ने की एक शक्ति मिलती है जो उसके प्रणय–अनुभवों को परिपक्वता प्रदान करती है बल्कि संघर्षशील जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा भी देती है –

तुम से पृथक स्वयं को जब अनुभव करता हूँ मैं

छोटी से छोटी पीड़ा से भी डरता हूँ मैं

तुम्हें कवच की भांति वक्ष पर धार लिया मैंने

हाय, सभी से भिन्न, अनोखा प्यार किया मैंने।[16]

ठाकुर प्रसाद सिंह ने 'वंशी और बादल' मे संथाली जनजातियों के सौंदर्य का अद्भूत वर्णन किया है जो हमें संथाली जातियों के व्यवहार और उनकी दैनिक क्रियाओं से भी परिचित कराता है। देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' भी 'तुम' गीत में प्रिया के रूप सौंदर्य का भव्य चित्रण करते हुए प्रेयसी को खूबसूरत गजल से उपमित करते हैं –

गीत–सी गंभीर होकर भी

तुम गजल–सी

खूबसूरत हो।[17]

निष्कर्ष तौर कहा जा सकता है कि नवगीतकार की सौंदर्य चेतना प्रकृति के हर पहलू से जुड़ी है। नदी, जल, सागर, फूल, चांदनी, पेड़, बाग–बगीचों से लेकर नीले आसमान पर चमकते इन्द्रधनुष तक में नवगीतकार ने सौंदर्य के उपमान तलाश किए हैं। नवगीतकारों की सौंदर्य–चेतना व्यक्तिक न होकर सामाजिक चेतना का प्रतिनिधित्व करती है। अन्त में डॉ. राजेन्द्र गौतम के शब्दों में– 'चांदनी धुले अलिप्त चित्रों की अपेक्षा जीवन की श्रम–धूलि से सने और माटी की गंध में रचे बसे अनुभवों को अंकित करने वाले नवगीतकार के लिए प्रकृति अपने वैभव में ही सुन्दर नहीं है, बल्कि उसने पत्रहीन ठूठों और ओर–छोर फैले मरूस्थल में भी सौंदर्य को खोजा है। यह इस बात का परिचायक है कि नवगीत की सौन्दर्य–दृष्टि विपरीत से विपरीत परिस्थितियों के बीच विकसित हो सकने वाली जिजीविषा से प्रेरित है।'[18]

---

[1]हरापन नहीं टूटेगा, रमेश रंजक, पृ. 61
[2]गीतम, वही, पृ.63
[3]नवगीत दशक–3, सुधांशु उपाध्याय (संपा. शंभुनाथ सिंह) पृ. 53
[4]नये पुराने गीत अंक–4, निर्मला जोशी, संपा. दिनेश सिंह, पृ. 57
[5]विचार बोध, केदारनाथ अग्रवाल, पृ.85
[6]मिट्टी बोलती है, रमेश रंजक, पृ.71
[7]आहत है वन, कुमार रवीन्द्र, पृ.20
[8]नवगीत दशक–2, विजय किशोर मानव, संपा. शंभुनाथ सिंह, पृ.69
[9]नवगीत दशक–2, अनूप अशेष, संपा. शंभुनाथ सिंह, पृ.33
[10]गीत पंचम, वीरेन्द्र मिश्र, पृ.174
[11]फिर गुलाब चटके, इसाक अश्क, पृ.93
[12]भीतर सांकल बाहर सांकल, कुंअर बैचन, पृ.84

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 6 Issue 10, October 2016,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

[13]गीत पंचम, वीरेन्द्र मिश्र, पृ.65
[14]अविराम चल मधुवंती, वही, पृ.25
[15]रवीन्द्र भ्रमर के गीत, रवीन्द्र भ्रमर, पृ. 46
[16]जो नितांत मेरी है, बालस्वरूप राही, पृ.13
[17]गंधमादन के अहेरी, देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', पृ.90
[18]हिन्दी नवगीतः उद्‌भव और विकास, पृ. 187–188